International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(6): 32-35

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(6): 32-35
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 22-09-2019
Accepted: 24-10-2019

प्रवीण ममगाई
शोधार्थी पीएच.डी. दिल्ली
विश्वविद्यालय, भारत

Corresponding Author:
प्रवीण ममगाई
शोधार्थी पीएच.डी. दिल्ली
विश्वविद्यालय, भारत

वेद-वेदाङ्ग एवं ज्योतिष ग्रंथों में नक्षत्र निरूपण

प्रवीण ममगाई

"नक्षत्र" व्युत्पत्ति

"नक्षत्र" शब्द नक्ष् धातु और अत्रन् प्रत्यय से बना है (नक्ष् + अत्रन्)[1] यहाँ नक्ष् धातु गत्यर्थक है जिसका अर्थ तारा है। तारा हमेशा चलता है। [2] और यह भी वर्णन है कि नक्षत्रों के नक्षत्रत्व इसी में है कि वे कभी नष्ट नहीं होते। [3] यजुर्वेद शतपथ में भी नक्षत्रों को गतिशल बताया है [4] निरुक्त में भी नक्षत्र शब्द का निरूपण किया गया है।

1. नक्ष् धातु गतिशीलता का वाचक है, 2. नञ्पूर्वक क्षत्र का अभिप्राय क्षत्र रहित होने से है। [5] पाणिनीय ने भी नक्षत्र की व्युत्पत्ति इसी प्रकार से की है न+क्षर्+अत्रन् = नक्षत्र, अर्थात् जो क्षीण नहीं होता है वह "नक्षत्र" है। [6] वेदों में नक्षत्रों के अनेक पर्यायवाची शब्दप्राप्त होते हैं- भ, नभ, ऋक्ष, उडु, रोचना, तारक और तारा आदि शब्द।

नक्षत्रोत्पत्ति

नक्षत्रों की उत्पत्ति के विषय में तैत्तिरीय में कहा गया है कि द्यु और पृथ्वी के मध्य में जो यह सम्पूर्ण स्थावर-जंगम जगत् दिखायी देता है प्रलयान्त समय में ये सम्पूर्ण जल ही जल था तो उस समय कृतिकादि नक्षत्र जल को तैरकर पार करके इस लोक में आये इस प्रकार यह तारों से सुसज्जित हो गया। [7]

यजुर्वेदीय शतपथ ब्राह्मण के मतानुसार नक्षत्रों की उत्पत्ति प्रजापति के द्वारा किये गये तप से ऊपर की और प्रकाशित ज्योतियों ने ही नक्षत्रों का रूप धारण किया। द्वितीय मत में प्रजापति रूपी आदित्य के आँसुओं से नक्षत्रों की उत्पत्ति हुई। [8]

वैदिक काल में "नक्षत्र"

वैदिक काल में देखा जाय तो तारों "नक्षत्रों" का इतस्तत: फैले हुए आकाश मंण्डल का वर्णन प्राप्त होता है। ऋग्वेद संहिता [9] अथर्ववेद [10] के मन्त्रों में कहा गया है कि विश्वदर्शी सूर्य के आते ही नक्षत्र और रात्रि चोरों की तरह भाग जाते हैं।

---

1 नक्षति शोभांगच्छति। संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ पृ. 578 1989

2 ता: हि नित्यमेव गच्छन्ति। वैदिक कोश पृ. 760 चन्द्रशेखर, अनिलकुमार

3 तन्नक्षत्राणां नक्षत्रत्वं यन्न क्षियन्ति। गोपथ ब्राह्मण 2.1.8

4 यन्तिवाऽआप:। इत्यादित्य एतिचन्द्रमायन्ति नक्षत्राणि। श. ब्राह्मण 11.5.7.10

5 नक्षत्राणिनक्षतेर्गतिकर्मण: नेमानिक्षत्राणि इतिचब्राह्मणम्। निरुक्त 3.4.20

6 नक्षीयते नक्षरति इति नक्षत्रम्। वैदिक कोश भाग-2 पृ. 760

7 द्यावापृथिव्योरन्तर्मध्ये यदिदं स्थावरजंगमात्मकं जगदृश्यते... लोकान्तरेषुगता:। तैत्तिरीय ब्राह्मण सायण भाष्य पृ.- 227

8 भूय एवं स्यात्प्रजायेतेति स आदित्येन... नक्षत्राण्यभवन्नथ:। श.ब्राह्मण 6.7.2.4

9 ऋग्वेद संहिता-10/68/11

10 अथर्ववेद - 13/2/17

"अपत्येतावयो यथा नक्षत्रा यन्त्यक्तुभिः। सूराय विश्वचक्षरने।।"
"अभिश्यवं न कृशनेमिरश्वं नक्षत्रेभिः पितरो द्यामपिंशत्।।"

इस प्रकार इन दोनों मन्त्रों में तारों को नक्षत्र कहा गया है और दूसरी बात यह है कि नक्षत्र शब्द केवल चन्द्रमार्ग में आने वाले नक्षत्रों के लिए ही नहीं, अपितु सभी तारों के लिए आया है।

ऋग्वेद में चन्द्रमार्ग के सभी 27 नक्षत्रों का तो वर्णन नहीं है परन्तु यहाँ कुछ नक्षत्रों के नाम अवश्य ही उल्लिखित हैं। इसमें- "तिष्य" जो कि पुष्य नक्षत्र के लिए प्रयुक्त हुआ होगा "चित्रा" नक्षत्र है "रेवती" है "अधा" और "अर्जुनी" [11] नक्षत्रों का उल्लेख प्राप्त होता है।

प्रस्तुत जो ऋग्वैदिक 'अघा' और अर्जुनी नक्षत्र हैं उनके स्थान पर अथर्ववेद में 'मघा' और 'फाल्गुनी' शब्द पड़ गये हैं। [12] जहाँ ऋग्वेद संहिता में लगभग 10 बार नक्षत्र शब्द का प्रयोग हुआ है वही अथर्ववेद के दो सम्पूर्णसूक्तों के देवता 'नक्षत्राणि' हैं।

तैत्तिरीय संहिता में नक्षत्रों से सम्बन्धित अनेक वर्णन प्राप्त होते हैं। कहीं उनके नामों की व्युत्पत्तियाँ बतायी गयी है और कहीं-कहीं बीच-बीच के नक्षत्रों के नाम प्रसंङ्गवशात आते जाते हैं और कहीं सब नक्षत्रों के नाम और उनके देवता अधिपतियों के नाम स्पष्टरूप से पठित है। तैत्तिरीय संहिता एवं तैत्तिरीय ब्राह्मण में 28 नक्षत्रों के विषय में सूची प्राप्त होती है। [13] वही काठक संहिता में भी 27 नक्षत्रों के विषय में बताया गया है और अथर्ववेद [14] में भी 28 नक्षत्रों का उल्लेख प्राप्त होता है।

हम इस प्रकार नक्षत्रों की सूची देख सकते हैं-

क्र. सं.	तैत्तिरीय सं.	काठक संहिता	अथर्ववेद संहित	देवता
1.	कृतिका	"	कृत्तिका	अग्नि
2.	रोहिणी	"	"	प्रजापति
3.	मृगशिहर्ष	इन्वका	मृगशिरः	सोम
4.	आद्रा	बाहुः	आर्द्रा	रूद्र
5.	पुनर्वसू	पुनर्वसुः	पुनर्वसू	अदिति
6.	तिष्य	"	पुष्य	बृहस्पति
7.	आश्रेषा	आश्लेषा	आश्लेषा	सूर्य
8.	मघा	"	"	पितृ
9.	फाल्गुनी	" नीः	पूर्वाफाल्गुनीः	अर्यमा
10.	फाल्गुनी	उत्तराफाल्गुनीः	"	भग
11.	हस्त	"	"	सविता
12.	चित्रा	"	"	इन्द्र
13.	स्वाती	निष्ट्या	स्वाती	वाय
14.	विशाखे	विशाखम्	विशाखे	इन्द्राग्नि
15.	अनुराधा	"	"	मित्र
16.	रोहिणी	ज्येष्ठा	ज्येष्ठा	इन्द्र
17.	विचृतौ	मूलम्	मूलम्	पितृ
18.	अषाढ़ा	"	"	आपः
19.	आषाढ़ा	उत्तराषाढ़ा	अषाढ़ा	विश्वेदेव
20.	-	-	अभिजित्	विष्णु
21.	श्रोणा	अश्वत्थ	श्रवण	वसु
22.	श्रविष्ठा	"	"	इन्द्र
23.	शतभिषक्	"	"	अजएकपाद्
24.	प्रोष्ठपदा	"	"	अहिर्बुध्नियं
25.	प्रोष्ठपदा	उत्तरप्रोष्ठपदा	प्रोष्ठपदा	पूषा
26.	रेवती	"	"	अश्विन्
27.	अश्वयुजौ	"	"	"
28.	अपभरणी	अपभरणीः	भरणी	यम

इस प्रकार वैदिक काल में नक्षत्रों की सूची से स्पष्ट होता है कि नक्षत्रों का प्रारम्भ कृतिका नक्षत्र से ही होता था इसका प्रमाण देते हुए यजुर्वेदीय शतपथ ब्राह्मण में कृतिका की स्थिति पूर्व दिशा में बताते हुए कहा है कि ये कृतिका पूर्वदिशा से हटते नहीं जबकि अन्य सभी नक्षत्र पूर्व दिशा से हट जाते हैं [15]

वैदिककाल में यज्ञादि धार्मिक कृत्यों की प्रधानता थी इसलिए सभी नक्षत्रों के ज्ञान के साथ उनके सभी देवताओं का ज्ञान भी आवश्यक था इसलिए इस पर काफी बल दिया गया होगा और इसके पीछे यह अवधारणा थी कि नक्षत्रों के देवताओं को जानकर और अनकी पूजा करने से सभी प्रकार के कष्ट और दोष दूर हो जाते थे और यज्ञों का उचित लाभ तथा फलप्राप्ति हो जाती थी।

वेदाङ्गकाल में नक्षत्र

वेदाङ्गकाल में आते-आते हमें नक्षत्रों के विषय में और विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है उनका क्या-क्या महत्त्व है वैदिक धार्मिक कृत्यों में इस प्रकार से अनेक स्थलों पर नक्षत्रों के विषय में वर्णन प्राप्त होता है।

ज्योतिष ग्रन्थों में सर्वप्रथम और सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेदाङ्ग ज्योतिष में भी उपरोक्त वैदिक ग्रन्थों के समान ही नक्षत्रों के साथ उनके अधिष्ठातृ देवताओं का नामोल्लेख है और वेदाङ्गज्योतिष में यह नक्षत्रों के आरम्भिक होने वाले नक्षत्र में अन्तर हो जाता है जहाँ वैदिक काल में कृतिका नक्षत्र से नक्षत्रों का आरम्भ होता था वही परवर्तीकाल आते-आते अश्विनी नक्षत्र से नक्षत्रों का आरम्भ कहा गया और यहाँ नक्षत्रों की संज्ञाओं में भी अन्तर देखने को मिलता है जैसे- पूर्वाषाढा को आप, पूर्वाभाद्रपद को अजैकपाद धनिष्ठा को श्रविष्ठा आदि अन्य नक्षत्रों में भी इस प्रकार से पर्याय मिलते हैं। वेदाङ्ग ज्योतिष में 27 नक्षत्रों के नाम सङ्केतिक अक्षरों में उल्लिखित है। किन्तु हमें यहाँ कहीं भी अभिजित नक्षत्र का संकेत नही मिलता [16] और वेदाङ्गज्योतिष

[11] नयो युच्छति तिष्योयथा...। ऋ.सं. 5.54.13
अस्थुरुचित्रा उपसः पुस्तान् मिता इव...। ऋ.सं.-4.51.2
येनानवग्वे अङ्गिरेदशग्वे सप्तास्ये रेवती रेवदूष। ऋ.सं. 4.51.4

[12] मघासु हन्यन्ते गावः फाल्गुनीषु व्युह्यिते। अथर्ववेद सं. 14.1.13

[13] अग्निर्देवता कृतिका नक्षत्रं प्रजापतिर्देवता रोहिणी नक्षत्रंमरूतो देवतेन्वका नक्षत्रं रूद्रो.। काठक संहिता 39.13.90।

[14] अथर्ववेद - 19.7.2-5

[15] एता ह वै प्राच्यै दिशो न च्यवन्ते। सर्वाणि हवाऽअन्यानि नक्षत्राणि प्राच्यै दिशश्च्यवन्ते..। श. ब्राह्मण 2.1.2.3

[16] जौ द्रा धः खे श्वे ही रो षा चिन् मू ष ण्यः सो मा धा नः।

में नक्षत्र और उनके देवताओं के ज्ञान के प्रयोजन को प्रतिपादित करते हुए कहा है कि- यज्ञ विधान में जातक का नाम उसके जन्म नक्षत्र का जो देवता है उसके अनुसार उस जातक का नामकरण होना चाहिए। [17]

वेदाङ्गोत्तरकाल- "नक्षत्र" वैदिककाल से परवर्ती क्रम आते-आते नक्षत्रों का महत्त्व समयानुसार बढ़ता गया है जहाँ संहिताकाल में नक्षत्रों को एक तारा रूप में नभराशि रूप में जाना जाता था वही वेदोत्तरकाल में यह तारा समूह रूपी जो नक्षत्रगण हैं वह पूर्ण रूप से नक्षत्र विद्या के रूप में ज्योतिर्विदों के सम्मुख आया। वैदिक काल में प्रधान रूप में था इसलिए नक्षत्रों से युक्त काल ही यज्ञों के लिए उत्तम कहा जाता था और कहा गया है कि सूर्योदय से पूर्व नक्षत्र आकाश में दिखाई देता है परन्तु सूर्य के प्रकट होते ही नक्षत्र सूर्य के पश्चिम में चला जाता है और यही समय मांगलिक कार्यों के लिए शुभ एवं उचित समय माना गया परन्तु परवर्ती-काल के आते-आते नक्षत्र केवल यज्ञों तक ही सीमित नहीं रहा अपितु सभी धार्मिक कृत्यों "जन्मनाम, विवाह संस्कार, ग्रहदशा, व्यापार, शिक्षा, यात्रा विचार, जातिविचार, क्रय-विक्रय आदि सभी क्षेत्रों के लिए कार्यारम्भ से पूर्व नक्षत्रों का ज्ञान उपयोगी हो गया।

अर्वाचीन ज्योतिषग्रन्थों में "नक्षत्र"

वशिष्ठ संहिता- वशिष्ठ संहिता में रोहिणी आदि नक्षत्रों के विषय में विस्तृत रूप विवेचन प्राप्त होता है यहाँ कहा है [18] कि-

"रोहिणी शकटाकारा संस्थाना पञ्चतारका।
नक्षत्रस्थावरं विद्धि दैवतं च प्रजापतिः।।
"कृतिका क्षुरसंस्थाना षट्तारा चाग्निदेवता।
अग्निवेश्यश्च गोत्रेण विज्ञेया मृदुदारूणा।।
"त्रिगरं सोमदैवत्यं मृदुं मृगशिरो विदुः।।
"एकतारा भवेद्रार्दा रूद्रश्चैवात्र देवता।।

इस प्रकार से वशिष्ठ संहिता एवं ज्योतिमहानिबन्ध में हमें नक्षत्रों के देवता नक्षत्रगोत्र, अथवा नक्षत्र स्वभावों का वर्णन तथा नक्षत्रों में किये जाने वाले कार्यों का शुभ एवं अशुभ फल बताया गया है।

वराहमिहिराचार्य (427 ई.)- ज्योतिष के मर्मज्ञ आचार्य वराहमिहिर ने अपनी वृहतसंहिता में ज्योतिष के सभी पक्षों पर प्रकाश डालते हुए नक्षत्रव्यूह प्रकरण में आचार्य ने कहा है [19] कि-

कृतिका नक्षत्राश्रित जो जातक होते हैं वे अग्निहोत्री यज्ञवेत्ता, वैयाकरण, कुम्हार, पुरोहितादि ज्योतिषी ये पदार्थ बताये हैं। रोहिणी नक्षत्राश्रित- व्यापारी, राजा, योगी, जलचर, ऐश्वर्य युक्त मृगशिरा आश्रित-फूल, फल, सुगन्धित द्रव्य, वनेचर जीवन, पत्रवाहक आदि।

आर्द्रा- सभी प्रकार के बुरे कार्य, क्रूर, भेद-भावयुक्त, परस्त्रीगानी, बेताल आदि। पुनर्वसु- अच्छे कार्य वाला, दानी, पवित्र, कुलीन, सुन्दर, बुद्धिमान, यशस्वी, धान्य, विनय, नौकरी-चाकरी आदि।

इसी प्रकार आचार्य वराहमिहिर ने 28 नक्षत्रों के विषय में अपने ज्ञान और बुद्धिमत्ता के आधार पर और पूर्व कथित नक्षत्रों के विषय अथवा फलों के आधार पर अपने वचनों को कहा। [20] इसी प्रकार आचार्य वराहमिहिर का विभाजन ब्राह्मणादि जातियों के आधार पर किया।

जाति-

ब्राह्मण- पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपदा और कृतिका।
क्षत्रिय- उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा और पौष।
वैश्यजाति के- पुनर्वसु, हस्त, अभिजित और अश्विनी।
सेवकों के लिए- मृगाशिरा, ज्येष्ठा, चित्रा और धनिष्ठा
किसान जाति- रेवती, अनुराधा, मघा, रोहिणी।
क्रूर मनुष्यों में- मूल, आर्द्रा, स्वाती, शतभिषा।
चाण्डाल जाति- आश्लेषा, विशाखा, श्रवण, भरणी। [21]

ज्योतिषरत्नमाला (961 ई.)

भास्कराचार्योक्ति- ज्योतिर्विद भास्कर ने भू-गोल की स्थिति बतायी है जिस कक्षा में नक्षत्र दृष्टिगोचर होते हैं उसको विद्वानों ने "नक्षत्रगोल" या "भ-चक्र" अथवा "भू-गोल" कहा है- इन्हीं नक्षत्रों के विषय में भास्कराचार्य ने कहा है- विश्वरचयिता ब्रह्मा ने 360 अंश परिमाण परिधि वाले भ-चक्र स्थिति 180 अंश अन्तरित उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवतारागत (अक्ष) पर भ-चक्र को स्थित कर ध्रुवतारा से 90 अंश पर स्थिति "रेवती" नाम के तारा के साथ ही सूर्य आदि सातों ग्रहों को अनवरत समगति से पश्चिमाभिमुख भ्रमण शक्ति देकर नियुक्त किया। [22]

मुहूर्त्तकल्पद्रुम (1500 ई. लगभग)

नक्षत्रों का वर्गीकरण- परवर्तीकाल में यह देखा जाता है कि ज्योतिर्विदों ने नक्षत्रों का अनेक प्रकार से वर्गीकरण किया प्रथम जो वर्गीकरण प्राप्त होता है वह मुखानुसार जिसमें 1. ऊर्ध्वमुख 2. अधोमुख 3. तिर्यगमुख इस प्रकार से तीन वर्गीकरण हैं।

द्वितीय प्रकार से वर्गीकरण- सातवारों की प्रकृति के अनुसार 7 प्रकार से प्राप्त होता है। जैसे- 1. ध्रुव (स्थिर) 2. चर (चल) 3. उग्र (क्रूर) 4. मिश्र (साधारण) 5. लघु (क्षिप्र) 6. मृदु (मैत्र) 7. तीक्ष्ण (दारूण)

रे मृ ध्राः श्वा ओ जस् त्रिष्वो हर् येष्ठा इत्यृक्षा लिंगैः। ऋ. ज्यो.-14 या. ज्यो. -18

17 नक्षत्रदेवता.. यजमानस्यशास्त्रज्ञैनां नक्षत्रजंस्मृतम्। ऋ.ज्यो.28/ या. ज्यो.-35

18 वशिष्ठ संहिता- 14 प्र. 5 श्लो. 7.3.12.17

19 वराहमिहिर कृत वृहतसंहिता 15 अध्याय श्लो. 1-27

20 वृहत्संहिता - अध्याय-15, श्लोक 1-27

21 वृहत्संहित - अध्याय-15 श्लोक 28,29,30

22 भास्कराचार्योक्ति रत्नमाला पृ.-59

इस प्रकार से हमें नक्षत्रों के अनेक विभाजन प्राप्त होते हैं[23]–

संज्ञा वर्गीकरण	स्पष्टार्थ चक्र	वार
ध्रुव, स्थिर	रोहिणी, उ.फा, उ.षा., उ.भा.	रवि
चर, चल	स्वाती, पुर्नवसु, श्रवण, धनिष्ठा., शत्भिषा	चन्द्र
उग्र, क्रूर	पू.फा., पू.षा., पू.भा., भरणी, मघा.	भौम
मिश्र, साधारण	विशाख, कृतिका,	बुध
क्षिप्र, लघु	हस्त, अश्विनि, पुष्य., अभिजित	गुरु
मृदु, मैत्र	मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा	शुक्र
तीक्ष्ण, दारूण	मूल ज्येष्ठा, आर्द्रा, अश्लेषा	शनि

इसी प्रकार ऊर्ध्वमुख में 9 नक्षत्र, अधोमुख में 9 नक्षत्र और तिर्यग युक्त 9 नक्षत्रों को जोड़कर 27 नक्षत्रों को ज्योतिर्विदों ने अपने-2 अनुसार उल्लेख किया है।

अर्वाचीन आचार्यों में रेणुदीक्षित जिनका समय 1323 संवत् में (ऋग्वेदी लघ्वाश्वलायनस्मृतिकार), कातीय गृह्यकारिका की रचना करने वाले पारस्कर गृह्यसूत्र के व्याख्याता गदाधर 1818 छठ, संकारगणपति की रचना करने वाले आचार्यों ने मूल वैदिक परम्परा से विमुख होकर आगममार्ग की (तन्त्रमार्ग की) ओर जाकर नक्षत्रों से नामकरण की एक अन्य नयी रीति को अपनाकर उन नक्षत्रों के "चू चे चो ला" इत्यादि अक्षरों को लेकर जातक का नक्षत्रनाम रखने की बात कही है। [24]

मुहूर्त्तपारिजात- ज्योतिष ग्रन्थ मुहूर्त-पारिजात में नक्षत्रों के अनेक भेद प्राप्त होते हैं [25] जैसे-

1. अन्धाक्ष, मध्याक्ष, मन्दाक्ष, सुलोचनक्षत्र
2. वृहदादिवर्ग- "वृहन् नक्षत्र, समनक्षत्र, जघन्य नक्षत्र,
3. विषमांघ्र्यादिवर्ग- "विषमापंघ्रिनक्षत्र यमांघ्रिनक्षत्र, चतुष्पादनक्षत्र, विषघटी: नक्षत्रादि।

उपसंहार

ज्योतिषशास्त्र में नक्षत्रों में भी पाँच नक्षत्रों का समूह पञ्चक के नाम से प्रसिद्ध हैं और जो विशेष रूप से पञ्चक विचार किया जाता है वह इन्हीं पाँच नक्षत्रों के समूह हैं- धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती में नक्षत्र पंचक कहे गये हैं।

इन पंचकों के विषय में कहा जाता है कि यदि जिसका पुत्र जन्म होता है तो उसके पाँच पुत्र होते हैं यदि इन पञ्चकों में परिवार में किसी की मृत्यु होती है तो उस परिवार में पाँच लोग की मृत्यु हो जाती है।

मैंने नक्षत्रों के विषय में बताने का प्रयास किया है। इनमें नक्षत्रों की उत्पत्ति किस प्रकार होती है और इनका प्रारंभ कहाँ से हुआ और आधुनिक काल तक किस प्रकार इनका फलन किया गया है यह बताने का प्रयास किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

मूल ग्रंथ

1. अग्निपुराण - उपाध्याय बलदेव, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, 1966
2. ऋग्वेद संहिता, सायणभाष्य, वैदिक संशोधनमण्डल, पूना 1941
3. कपिष्ठल, कठसंहिता, रघुवीर मेहरचन्द, लक्ष्मनदास, दिल्ली, 1968
4. कालमाधव, स्वाई ब्रजकिशोर, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2005
5. कौटिल्य अर्थशास्त्र, गैरोला वाचस्पति, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2015
6. ज्योतिषरत्नमाला, आचार्य पं. झा सीताराम, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1992
7. जातकाभरणम् (व्या.), मिश्र सत्येन्द्र, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी, वि.सं. 2069
8. तैत्तिरीय ब्राह्मण, आनन्दाश्रम मुद्रणालय, पूना, भाग-3, 1971
9. तैत्तिरीयसंहिता, लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, परमेश्वरानन्द शास्त्री, सं. मण्डनमिश्र, नई दिल्ली, प्रथम भाग-1981
10. पाणिनीय शिक्षा, कौडिन्न्यायन प्रमोदवर्द्धन, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2011
11. द्विवेदी भोजराज, आचार्य वराहमिहिर का ज्योतिष में योगदान, रंजन पब्लिकेशन्स, दरियागंज, नई दिल्ली-2002
12. शर्मा कल्याणदत्त, ज्योतिष पीयूष, श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट, हरिद्वार, शांति कुंज, संवत्-2064
13. कौडिन्न्यायन शिवराज आचार्य, भारतवर्षीय ज्योतिष के ज्वलंत प्रश्न और वेदांग ज्योतिष, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2008
14. झारखण्डी शिवनाथ, भारतीय ज्योतिष, अनुवादक - उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ, 2010
15. प्रसाद गोरख, भारतीय ज्योतिष का इतिहास, हिंदी समिति उत्तर प्रदेश, लखनऊ, 1974
16. धीर अपर्णा, राधेश्याम, यजुर्वेदीय ब्राह्मणों में ज्योतिष के तत्त्व, प्रतिभा प्रकाशन, अजेन्द्र मार्किट, प्रेम नगर, शक्ति नगर, दिल्ली-07, 2012

[23] मुहूर्त्त-कल्पद्रुम - श्लोक सं.-3-6

[24] भारतीय ज्योतिष के ज्वलन्त प्रश्न वेदाङ्गज्योतिष, पृ. सं. 24, 25

[25] मुहूर्त्त-पारिजात - पृ. सं. 24, 25, 26